



https://printo.it/pediatric-rheumatology/IN_HI/intro

ससिटमकि लुपस एरीदीमॅटोसस

के संस्करण 2016

१. ससिटमकि लुपस एरीदीमॅटोसस क्या होता है?

१.१ यह क्या होता है?

ससिटमकि लुपस एरीदीमॅटोसस (एसएलई) एक ऑटोइम्यून बीमारी है जो हमारे शरीर के विभिन्न अंगों को नुकसान पहुंचा सकती है, खास कर के त्वचा, दमाग, गुर्दे, एवं खून की नसे। यह बीमारी क्रोनिक यानि लम्बे समय तक चलने वाली होती है। ऑटोइम्यून यानी यह इस बीमारी में हमारी प्रतिरक्षा शक्ति, जो हमें बैक्टीरिया, वायरस आदि से बचाने में मदद करती है, हमारे ही शरीर के विपरीत काम करने लगती है और हमारे शरीर के अंगों को नुकसान पहुंचाने लगती है।

ससिटमकि लुपस एरीदीमॅटोसस बीसवीं सदी की शुरुआत से जानी गयी है। ससिटमकि यानी जो शरीर के विभिन्न अंगों पर असर करे, लुपस शब्द लैटिन भाषा में भेड़िये के लिए इस्तेमाल करा जाता है और एसएलई में रोगी के चेहरे पर दिखाई देने वाले तिली के आकर की लाली, भेड़िये के चेहरे पर दिखाई देने वाली सफ़ेद धारी से मिलती है। ग्रीक भाषा में " एरीदीमॅटोसस " का अर्थ लाल होता है और एस एल ई में चेहरे की लाली के कारण इस शब्द का प्रयोग किया गया है।

१.२ यह बीमारी कतिनी आम है?

एसएलई की बीमारी विश्व भर में पहचानी जाती है। यह बीमारी एशियाई, अफ़्रीकी व अफ़्रीकी अमेरिकन बच्चों में ज़्यादा पायी जाती है। यूरोप में यह बीमारी २५०० में से एक बच्चे में देखी जाती है और १५% बच्चे १८ वर्ष से काम आयु के होते हैं। १८ वर्ष से काम की आयु में शुरू होने वाली एसएलई की बीमारी को कई नाम दिए गए हैं जैसे: पीडियाट्रिक एसएलई, जुवेनाइल एसएलई, चाइल्डहुड एसएलई। १५ से ४५ वर्ष की महिलाओं में यह बीमारी अधिक पायी जाती है और पुरुषों की तुलना में महिलाओं को यह बीमारी ९ गुना अधिक हो सकती है। कशिरावस्था से पहले लड़कों में यह बीमारी अधिक हो सकती है।

१.३ यह बीमारी किस कारण से होती है?

इस बीमारी के होने के ठोस कारण की जानकारी नहीं है। यह छुआछूत की बीमारी नहीं है व एक से दूसरे को नहीं फैलती है। वैज्ञानिक सुरागों से यह जानकारी मिलती है कि यह ऑटोइम्यून बीमारी है जिसमें हमारे शरीर की प्रतिरक्षा शक्ति बाहर के शत्रुओं जैसे बैक्टीरिया, वायरस एवं अपने शरीर के अंगों के बीच में फर्क नहीं कर पाती और शरीर के विरुद्ध दूषित पदार्थ बनाने लगती है जो हमारे शरीर में इन्फ्लेमेशन यानि प्रज्वलन कर उसे हानि पहुंचाते हैं। प्रज्वलति अंग गरम, लाल, सूजा हुआ अथवा छूने पर दुखन करता है। यदि शरीर में अधिक समय तक किसी अंग में प्रज्वलन रहे तो वह उस अंग को हानि पहुंचा कर उसके कार्य को प्रभावित कर सकता है। इस बीमारी में इसीलिए प्रज्वलन को काम करने के लिए दवा दी जाती है।

प्रतिरक्षा शक्ति की इस खराबी के लिए पर्यावरण में पाये जाने वाले कारण के अलावा जेनेटिक या अनुवांशिक कारण भी हो सकते हैं। कशिरावस्था में होने वाले हॉर्मोन परिवर्तन, ज्यादा समय धूप में रहना, वायरल बुखार एवं कई दवाइयाँ भी इस बीमारी को उभार सकती हैं।

१.४ क्या यह जेनेटिक या वंशानुगत रोग है?

यह बीमारी परिवार में पायी जा सकती है परन्तु यह बीमारी जेनेटिक नहीं होती। बच्चे अपने माता पिता से कुछ अनुवांशिक अंश लेते हैं जिनके कारन इस बीमारी के होने की संभावना बढ़ सकती है परन्तु बीमारी हो ही जाएगी ऐसा मानना गलत होगा। यह बीमारी परिवार में पायी जा सकती है परन्तु यह बीमारी जेनेटिक नहीं होती। बच्चे अपने माता पिता से कुछ अनुवांशिक अंश लेते हैं जिनके कारन इस बीमारी के होने की संभावना बढ़ सकती है परन्तु बीमारी हो ही जाएगी ऐसा मानना गलत होगा। यहाँ तक की जुड़वाँ बच्चों में भी यही बीमारी होने की संभावना ५०% से भी कम होती है। इस बीमारी के लिए कोई जेनेटिक टेस्टिंग या भ्रूण में इस बीमारी का पता लगाने की कोई जांच उपलब्ध नहीं है।

१.५ क्या इस बीमारी से बचाव किया जा सकता है?

इस बीमारी के होने की ठोस वजह की जानकारी न होने की वजह से इस बीमारी से बचाव नहीं किया जा सकता परन्तु जिस बच्चे को यह बीमारी हो गयी हो उसे कुछ परहेज की आवश्यकता होती है जिससे यह बीमारी बढ़ सकती है जैसे मानसिक तनाव, बहुत देर धूप में रहना, हॉर्मोन व कुछ दवाइयाँ

१.६ क्या यह छुआछूत की बीमारी है?

नहीं, यह बीमारी छुआछूत की नहीं है व एक व्यक्ति से दूसरी को नहीं हो सकती।

१.७ इस बीमारी के प्रमुख लक्षण क्या हैं?

यह बीमारी पूरी तरह से उभर कर आने में हफ्ते, महीने या साल भी लगा देती है। जल्दी थकान

होना,शरीर में दर्द रहना,कभी कभी या हर दिन हल्का बुखार महसूस करना,वजन में कमी आना, भूख न लगना इत्यादि इस बीमारी के शुरुआती लक्षण होते हैं। समय के साथ साथ इस बीमारी में पाये जाने वाले विभिन्न लक्षण आने लगते हैं,अधिकतर त्वचा व मुंह पर असर देखा जाता है।त्वचा पर विभिन्न तरह के दाग या धुप के कारण लाली आ सकती है।नाक के अंदर या मुंह में छाले आ सकते हैं।१/३ से १/२ बच्चों में गालों और नाक के ऊपर तिली के आकर की लाली वाला दाग दिखाई देता है।कुछ बच्चों में बालों का अत्याधिक झड़ना देखा जाता है।ठण्ड में हाथों का सफ़ेद,नीला व लाल पड़ना भी इस बीमारी में देखा जाता है।(रेनॉड फेनोमेन)।जोड़ों की अकड़न व सूजन,मांसपेशियों में दर्द,खून की कमी, हलकी चोट लगने पर तुरंत नील पड़ना,सर व छाती में दर्द होना अथवा दौरे पड़ना भी इस बीमारी में देखे जाते हैं।कई बच्चों में गुर्दों पर प्रभाव देखा जाता है और गुर्दों पर प्रभाव बीमारी की तीव्रता बताता है। उच्च रक्तचाप, पेशाब में खून अथवा प्रोटीन जाना,आँखों के ऊपर,चेहरे व पैरों पर सूजन आना, गुर्दों के प्रभावति होने के प्रमुख लक्षण है।

१.८. क्या हर बच्चे की बीमारी एक जैसी होती है?

इस बीमारी के लक्षण सब में अलग तरह से आते हैं।किसी में ज्यादा तीव्रता के साथ तोह किसी में हलकोकुछ बच्चों में एक समय पर कुछ ही लक्षण दिखाई देते हैं व समय के साथ बीमारी पूरी तरह उभर कर आती है। समय पर सही इलाज करने से बीमारी की तीव्रता काम हो जाती है।

१.९. क्या बच्चों में पायी जाने वाली एसएलई की बीमारी वयस्कों की बीमारी से भिन्न होती है?

आमतौर से बच्चों व वयस्कों में यह बीमारी एक सी होती है पर बच्चों में यह बीमारी वयस्कों की तुलना में ज्यादा गंभीर होती है। बच्चों में इस बीमारी से गुर्दे व दमाग भी ज्यादा प्रभावति होते हैं।

२. नदान व उपचार

२.१. इस बीमारी का नदान कैसे किया जाता है?

इस बीमारी का नदान रोगी के बताये लक्षण व रोगी में पाये जाने वाले संकेत देख कर किया जाता है। इसके साथ खून व पेशाब की जांच के साथ अन्य बीमारियां ना होने की स्तथि में ही इस बीमारी का नदान किया जाता है।इस बीमारी के नदान में कठनाई होती है क्योंकि रोगी में सभी संकेत व लक्षण एक साथ नहीं प्राप्त होते।इस बीमारी को अन्य बमारियों से भिन्न कर पाने के लिए अमेरिकन रहुमतस्म एसोसिएशन ने ११ लक्षणों की सूची बनाई है जो इस बीमारी के नदान में मदद करते हैं।

यह सूची उन लक्षणों को ध्यान में रख कर बनाई गयी है जो इस बीमारी में आमतौर पर पाये जाते हैं।११ में से काम से काम ४ लक्षण होने पर ही इस बीमारी का ठोस नदान किया जाता

है,हालाँकि वरिष्ठ चकित्सक ४ से काम लक्षण होने पर भी इस बीमारी का नदान कर पाते हैं।यह लक्षण नमिन है:

चेहरे पर ततिली के आकर की लाली

यह लाली आँखों के नीचे गालों पर व नाक के ऊपर होती है

धूप से त्वचा का प्रभावति होना

धूप से सेंसिटिविटी होने से धूप का प्रकोप अधिक होता है और कपड़ों से ढकी हुई त्वचा पर असर नहीं होता

डसिकाँइड लूपस

यह पैसे के आकर का उभरा हुआ दाग होता है जिसके ऊपर से त्वचा की परत छूट जाती है,ठीक होने के पश्चात यह दाग छोड़ देता है।दूसरे समुदायों की तुलना में अफ्रीकी बच्चों में यह अधिक पाया जाता है।

नाक व मुँह में छाले

यह छाले नाक व मुँह के अंदर होते हैं।इनमें दर्द नहीं होता।नाक के छालों में से खून भी बह सकता है।

गठिया

इस बीमारी में गठिया से अधिकतर बच्चे पीड़ित होते हैं।इसमें ऊँगली,कलाई,कोहनी,घुटने,कंधे आदि जोड़ों में दर्द व सूजन आ जाती है।यह सूजन एक जोड़ से दूसरे में आ सकती है या दोनों तरफ के एकसे जोड़ों में भी आ सकती है।जोड़ों में अधिकतर टेढ़ापन नहीं आता।

प्लूराइटिस

फेफड़े की ऊपरी झलिली यानी प्लूरा के प्रज्ज्वलन को प्लूरसी कहते हैं और हृदय की झलिली यानो पेरिकार्डियम के प्रज्ज्वलन को पेरिकार्डिटिस कहते हैं।इन नाज़ुक झलिलियों के प्रज्ज्वलन के कारण हृदय व फेफड़ों के इर्द गिर्द पानी इककठा हो जाता है।फेफड़ों के इर्द गिर्द पानी आने से श्वास लेने में तकलीफ होती है।

गुर्दों पर प्रभाव

अधिकतर बच्चों के गुर्दे इस बीमारी से प्रभावति होते हैं,किसी में कम व किसी में बहुत अधिक प्रभाव देखा जाता है।शुरुआत में गुर्दे प्रभावति होने का कोई लक्षण नहीं दखिता व पेशाब एवं गुर्दों के कार्य की खून जांच से ही इस खराबी का पता किया जाता है।अधिक खराबी होने पर पेशाब में अधिक प्रोटीन बहार निकलता है व पैरों और आखों के इर्द गिर्द सूजन दिखाई देती है।

केंद्रीय तंत्रिका तंत्र

दमाग पर प्रभाव से सर दर्द,दौरे,व मनोविकार जैसे ध्यान न लगा पाना,याद न रख

पाना, उदासी या अवसाद, मनोविकृति (एक गंभीर मानसिक रोग जिसमें सोच व व्यवहार परिवर्तित हो जाते हैं) हो सकते हैं।

रक्त कण के विकार

रक्त कण एंटीबाडीज के प्रभाव से नष्ट होने लगते हैं। लाल रक्त कण (जो शरीर के विभिन्न अंगों तक ऑक्सीजन पहुंचाते हैं) के टूटने को हेमोल्यूसिस कहते हैं और इससे हेमोल्युटिक एनीमिया हो सकता है। रक्त कण नष्ट होने की प्रक्रिया धीमी व काम हानिकारक हो सकती है या अधिक रक्त कण एकदम नष्ट होने से आपात्कालीन स्थिति आ सकती है।

रक्त के सफ़ेद कण भी एसएलई में कम हो जाते हैं पर यह गंभीर नहीं होता। सफ़ेद कण की कमी को लुकोपीनिया कहते हैं।

रक्त के जमाव में सहायता करने वाले कण जो की प्लेटलेट कहलाते हैं, उनकी कमी को थ्रोम्बोसीटोपेनिया कहते हैं। प्लेटलेट कण की कमी से बच्चों के आंत, दमाग, गुर्दे व चमड़ी से रक्त रसि सकता है।

प्रतिरक्षा शक्ति की खराबी

प्रतिरक्षा शक्ति की खराबी उन एंटीबाडीज की खराबी होती है जो इस बीमारी की ओर इशारा करती है।

एंटीफॉस्फोलिपिड एंटीबाडी का होना (अपेंडिसिस-१)

एंटी नेटवि डीएनए एंटीबाडी (यह एंटीबाडी शरीर के अनुवांशिक तत्व के खिलाफ होती है) यह एंटीबाडी खास लुपस में ही पायी जाती है व इसकी मात्रा का माप करने से चिकित्सक को लुपस की दशा मापने में मदद मिलती है।

एंटी एसएम एंटीबाडी: यह एंटीबाडी सबसे पहले मसि स्मिथ नामक महिला में देखी गयी थी। यह एंटीबाडी एस एल ई की बीमारी में पायी जाती है।

एंटी न्यूक्लीयर एंटीबाडी (एएनए)

यह एंटीबाडी रक्त कण के न्यूक्लियस के विरुद्ध होती है व लुपस के लगभग शतप्रतिशत मरीजों के रक्त में पायी जाती है। परन्तु सिर्फ एएनए का पाया जाना ही इस बीमारी का सबूत नहीं होता, यह सिर्फ एक लक्षण है। एएनए ५-१५% स्वस्थ बच्चों में भी पाया जाता है।

इन जांचों का क्या महत्व है?

इन जांचों के द्वारा हम लुपस की बीमारी की पुष्टि कर सकते हैं व यह भी देख सकते हैं की इस बीमारी की वजह से शरीर के कौन कौन से अंग प्रभावित हुए हैं। इस बीमारी में समय समय पर रक्त व पेशाब की जांच करना ज़रूरी है जिससे इस बीमारी की तीव्रता व दवा के दुष्परिणाम अथवा दवा के असर के बारे में जानकारी मिल सके।

सामान्य जाँचे विभिन्न अंगों के असर को दर्शाती है। ईएसआर (एरीथ्रोसाइट सेडीमेंटेशन रेट) व सीआरपी (सी रिएक्टिव प्रोटीन), दोनों ही प्रज्वलन में बढ़ी हुई मात्रा में पाये जाते हैं। लुपस की बीमारी में सी आर पी ठीक भी हो सकता है व सी आर पी अधिक होने से कीटाणु का

संक्रमण होने की संभावना होती है। रक्त कण की जांच से एनीमिया, सफ़ेद कण की कमी व प्लेटलेट की कमी के वषिय में जानकारी मिलती है। सीरम प्रोटीन एलेक्ट्रोफोरेसिस से गामा ग्लोब्युलिन की मात्रा का अनुमान लगता है (जो इस बीमारी में प्रज्ज्वलन व एंटीबाडी अधिक होने से बढ़ जाते हैं)। एल्ब्यूमिन: गुरदे पर प्रभाव होने से यह कम हो जाता है रक्त की सामान्य जांच जैसे यूरिया, नाइट्रोजन, इलेक्ट्रोलाइट इत्यादि से गुरदे पर प्रभाव, जगिर व मांसपेशियों पर प्रभाव देखा जा सकता है। लविर फंक्शन टेस्ट व मसल एंजाइम: इनके द्वारा जगिर व मांसपेशियों पर प्रभाव देखा जा सकता है। गुरदे पर प्रभाव देखने के लिए बीमारी की शुरुआत व समय समय पर पेशाब की जांच करना अनिवार्य है। पेशाब की जांच में यदि लाल रक्त कण व एल्ब्यूमिन पाया जाता है तो वह गुरदे के प्रज्ज्वलन की ओर संकेत करता है। कभी कभी २४ घंटे का पेशाब इकट्ठा कर उसमें एल्ब्यूमिन की जांच करनी पड़ती है जो गुरदे की बीमारी को जल्दी पकड़ पाने में मदद करती है। कॉम्प्लीमेंट लेवल: कॉम्प्लीमेंट प्रोटीन हमारे शरीर की जन्मजात प्रतिरोधक शक्ति का हिस्सा होते हैं। कुछ कॉम्प्लीमेंट (सी३ व सी४) प्रज्ज्वलन में काम हो जाते हैं व लुपस की बीमारी की तीव्रता दर्शाते हैं, खास कर गुरदे की बीमारी का अनुमान कॉम्प्लीमेंट कम होने से लगाया जाता है। शरीर के विभिन्न अंगों पर लुपस के प्रभाव को देखने के लिए अब कई जाँचे उपलब्ध हैं, जैसे बायोपसी (किसी अंग के टुकड़े की जांच), गुरदे की बायोपसी अधिकतर तब की जाती है जब गुरदे पर प्रभाव देखा जाता है। इस जांच से गुरदे पर लुपस के प्रभाव के बारे में जानकारी मिलती है व सही दवाएं देने में मदद मिलती है। त्वचा की बायोपसी से लुपस के कारण त्वचा पर होने वाले प्रभाव व त्वचा की रक्त कोशिकाओं में होने वाले प्रज्ज्वलन के वषिय में जानकारी मिलती है। छाती का क्ष करिण (दिल व फेफड़े के लिए), इकोकार्डोग्राफी, इलेक्ट्रोकार्डोग्राफी, इलेक्ट्रोएन्सेफेलोग्राफी, पल्मोनरी फंक्शन टेस्ट, एमआरआई, दमाग के स्कैन, अन्य अंगों की बायोपसी इत्यादि अन्य जाँचे हैं जो इस बीमारी में की जा सकती हैं।

२.३ क्या इसका इलाज संभव है?

अभी इस बीमारी को जड़ से समाप्त करने का कोई इलाज संभव नहीं है। इस बीमारी का इलाज कर इससे होने वाली जटिलताओं का निदान किया जा सकता है व विभिन्न अंगों को प्रभावित होने से बचाया जा सकता है। शुरुआत में बीमारी का भार अधिक होने के कारण ज्यादा और अधिक मात्रा में दवाएं इस्तेमाल करनी पड़ती हैं पर कुछ समय में कुछ दवाओं के साथ बच्चों की तबियत बिल्कुल ठीक रह सकती है।

२.४ इस बीमारी के लिए क्या इलाज उपलब्ध है?

इस बीमारी के लिए बच्चों में उपयोग के लिए कोई भी दवा अधिकृत नहीं है और अधिकांश दवाएं शरीर में लुपस के कारण होने वाले प्रज्ज्वलन को काम करने में ही मदद करती हैं। इस बीमारी के इलाज के लिए ५ तरह की दवाएं इस्तेमाल की जाती हैं, जो निम्न हैं:

नॉन स्टेरॉइडल एंटी इन्फ्लेमेटरी ड्रग्स (एन एस ऐ आई डी)

एन एस ऐ आई डी जैसे आइबूप्रोफेन अथवा नेप्रोसीन गठिया के कारण होने वाले दर्द को काम करने में मदद करती है। इन दवाइयों को शुरुआत में अधिक मात्रा में दे कर इनकी मात्रा गठिया काम होने के साथ काम कर दी जाती है। यह दवाएं कई प्रकार की होती हैं, एस्पिरिन भी इसी गूट की एक दवा है जो जोड़ों के दर्द में इस्तेमाल की जाती है। बच्चों में एस्पिरिन काम मात्रा में तब दी जाती है जब रक्त के जमने व रक्त का थक्का बनने की सम्भावना होती है।

एंटी मलेरिअल ड्रग्स

एंटी मलेरिअल ड्रग्स जैसे हाइड्रोक्सीक्लोरोक्विन इस बीमारी में होने वाली त्वचा की तकलीफ का इलाज व उसकी रोकथाम करने में बहुत मदद करती है। इन दवाइयों का असर होने में कभी कभी कुछ महीने भी लग जाते हैं। शुरुआत में ही यह दवाएं देने से लुपस की तीव्रता व उसके कारण से होने वाली गुरदे, हृदय व अन्य अंगों की खराबी को रोक जा सकता है। मलेरिया व लुपस का आपस में कोई सम्बन्ध नहीं है पर हाइड्रोक्सीक्लोरोक्विन शरीर की प्रतिरिधक शक्ति को काबू में रखने में मदद करती है।

कॉर्टिकोस्टेरॉइड्स

कॉर्टिकोस्टेरॉइड्स, जैसे प्रेडनिसोन व प्रेडनिसिलोन, प्रज्वलन को काम कर के प्रतिरिधक शक्ति की खराबी को कम करते हैं। यह लुपस की बीमारी की रोकथाम के लिए प्रमुख दवाएं हैं। कुछ बच्चों की हल्की बीमारी के लिए प्रेडनिसिलोन व हाइड्रोक्सीक्लोरोक्विन ही पर्याप्त होते हैं। जब बीमारी अधिक तीव्र होती है या अंदरूनी अंगों की खराबी के साथ होती है तब इन दवाइयों को इम्युनोसप्रेसिव ड्रग्स के साथ मिला कर दिया जाता है। बिना कॉर्टिकोस्टेरॉइड्स की मदद के शुरुआत में लुपस की बीमारी पर काबू नहीं पाया जा सकता। कुछ बच्चों को यह दवाएं महीनों या कुछ साल के लिए भी लेनी पड़ सकती हैं। बीमारी की तीव्रता व अंगों पर प्रभाव के अनुसार कॉर्टिकोस्टेरॉइड्स की मात्रा निर्धारित की जाती है। अधिक मात्रा में या नस के द्वारा यह दवा तब दी जाती है जब गुरदे, दिमाग व लाल रक्त कण पर लुपस का प्रभाव होता है। इसको लेने से बच्चे एकदम से अच्छा महसूस करने लगते हैं पर लम्बे समय तक अधिक मात्रा में यह दवाएं हानिकारक होती हैं, इसीलिए बीमारी काबू में आते ही इनकी मात्रा जल्दी से जल्दी काम कर दी जाती है। इन दवाओं को धीरे धीरे काम किया जाता है व रक्त की जांच व बच्चे की जांच कर के इनकी मात्रा काम की जाती है जिससे बीमारी दबी रहे व वापस न आ पाये।

कभी कभी कुछ कशोरावस्था के बच्चे इन दवाइयों के दुष्परिणाम के कारण या अच्छा महसूस न करने के कारण इन दवाइयों की मात्रा अपने आप काम या अधिक कर लेते हैं। कोर्टिसोन हमारे शरीर में भी बनता है, पर जब हम यह अधिक मात्रा में लेते हैं तब हमारे शरीर में इसकी उत्पादन बंद हो जाता है, इसीलिए बच्चों व उनके अभिभावकों के लिए यह जानना महत्वपूर्ण है की यह दवाएं अपने आप बिना चिकित्सक की अनुमति के कम, ज्यादा या बंद करना खतरनाक व जानलेवा हो सकता है।

यदि कॉर्टिकोस्टेरॉइड्स लम्बे समय तक उपयोग किये जाते हैं तब हमारे शरीर के एंड्रेनल ग्रंथि इनका उत्पादन बंद कर देती है। कोर्टिसोन हमारे रक्तचाप को बनाये रखने में मदद करता है व एकदम इसे काम कर देना जानलेवा भी हो सकता है। इसके अलावा एकदम से इसे बंद कर देने से बीमारी वापस भी आने का खतरा होता है।

नॉन बायोलॉजिकल डजीज मोडफियिंग ड्रग्स

यह दवाएं, जैसे की एज़ाथाएोप्रीन, मेथोट्रेक्सेट, साइक्लोफोस्फेमाईड व् माइकोफनोलेट, कॉर्टिकोस्टेराॅइड्स से भिन्न रूप से काम करती हैं। इनका उपयोग चकित्सक तब करते हैं जब लुपस की बीमारी सिर्फ कॉर्टिकोस्टेराॅइड्स के उपयोग से काबू में नहीं आ पाती। कॉर्टिकोस्टेराॅइड्स के दुष्प्रभाव को काम करने व् बीमारी की तीव्रता को शांत करने के लिए इनका उपयोग किया जाता है।

एज़ाथाएोप्रीन व् माइकोफनोलेट गोलियों के रूप में, साइक्लोफोस्फेमाईड गोलियों व् नस के द्वारा व् मेथोट्रेक्सेट गोलियों व् त्वचा के अंदर सुई के द्वारा दिए जाते हैं।

बायोलॉजिक (डी एम ऐ आर डी)

बायोलॉजिक (डी एम ऐ आर डी) दवाएं एक विशेष प्रकार की दवाएं होती हैं जो अनुसन्धान के बाद बनाई जाती हैं। यह दवाएं या तो किसी एंटीबाडी के बनने को रोकती हैं या किसी एंटीबाडी के प्रभाव को रोकती हैं। इसी गुट की एक दवा जिसका नाम रीतुक्समैब है, इस बीमारी में तब इस्तेमाल करी जाती है जब अन्य साधारण दवाएं पूरी तरह बीमारी पर काबू नहीं कर पाती। बिलीमुमाब नामक एक अन्य दवा इसी गुट में शामिल है जो शरीर के बी सेल्स को लक्ष्य बनती है व् ऑटोएन्टीबाडी का उत्पादन कम करती है, फलित्हाल यह दवा लुपस के व्यसक मरीजों में इस्तेमाल की जाती है। बच्चों में इन दवाओं के उपयोग पर अभी अनुसन्धान चल रहा है।

ऑटोइम्यून बमिारओं खासकर लुपस पर सक्रिय रूप से अनुसन्धान चल रहा है जिससे ऐसे दवाएं बनाई जा सकें जो पूरी प्रतिरोधक शक्ति को कम न करके सिर्फ उन सेल्स को लक्ष्य बनायें जो इस बीमारी में खास रूप अदा करते हैं। आजकल इन दवाओं पर बहुत अनुसन्धान चल रहा है जिससे निश्चिती ही लुपस से पीड़ित बच्चों का भविष्य बेहतर हो पायेगा।

२.५. इन दवाओं के दुष्प्रभाव क्या हैं?

ये दवाएं लुपस की बीमारी के सभी लक्षणों को दूर करने में मदद करती हैं। अन्य दवाओं की तरह इन के भी दुष्प्रभाव होते हैं। इनकी जानकारी ड्रग थेरेपी के अंतर्गत दी गई है।

1=15*t1>नॉन स्टेराॅइडल एंटी इंफ्लेमेटरी ड्रग्स (एन एस ऐ आई डी) कुछ खाने के बाद लेने चाहिये नहीं तो वे पेट में जलन पैदा कर सकते हैं। इसी के साथ इन दवाओं की वजह से कभी कभी आसानी से नील पड़ जाना अथवा, जगिर व गुरदे पर प्रभाव भी पड़ सकता है। एंटी मलारलिल दवाएं आँख की रेटिना नामक परत में बदलाव ला सकती हैं, इसीलिए मरीजों को नियमित रूप से आँखों की जांच आँखों के डॉक्टर द्वारा करवानी चाहिए।

कॉर्टिकोस्टेराॅइड्स के कम व अधिक समय के दुष्प्रभाव हो सकते हैं। इन दवाओं को लम्बे समय तक अधिक मात्रा में लेने से इनके दुष्प्रभाव होने का खतरा अधिक होता है। इन दवाओं के मुख्य दुष्प्रभाव निम्न हैं: शरीर की बनावट में फर्क आना (जैसे, गालों का फूलना, आँखों पर सूजन आना, शरीर पर अधिक बाल उगना, त्वचा पर बैगनी धारियां पड़ना, मुहांसे होना अथवा

जल्दी नील पड़ जाना) वजन को नियंत्रित करने के लिए खान पान व कसरत का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। संक्रमतिरोग जैसे कृषय रोग व चकिन पाँक्स होना का अधिक खतरा होता है। जो बच्चा यह दवाएं ले रहा होता है व चकिन पाँक्स के मरीज़ के संपर्क में आता है ,उसे तुरंत अपने चकित्सक को मलिन चाहिए। चकिन पाँक्स से तत्काल सुरक्षा के लिए ऐसे बच्चों को पहले से बनी एंटीबाडी दी जानी चाहिए। पेट की तकलीफ जैसे बद्धजमी होना या पेट में जलन होना। इस तकलीफ के लिए एंटी अलसर दवाएं दी जाती है। विकास में कमी होना कम देखे जाने वाले दुष्प्रभाव: उच्च रक्तचाप मांसपेशियों में कमजोरी(बच्चों को सीढियाँ उतरने, चढ़ने में व बैठ कर खड़े होने में कठिनाई होती है) ग्लूकोस के पाचन में दिकित, खास कर जब अनुवांशिक रूप से मधुमेह होने की सम्भावना हो। मजिज़ में परिवर्तन आना, उदास रहना आंखों में तकलीफ जैसे मोतिया बदि बनना अथवा आंख का प्रेशर बढ़ना(ग्लौकोमा) हड्डियों क पतला पड़ना(ऑस्टियोपोरोसिस)। यह दुष्प्रभाव कसरत करने, कैल्शियम से भरपूर खान पान व कैल्शियम एवं वटामिन डी लेने से नहीं होता। यह ध्यान रखना जरूरी है की यह दुष्प्रभाव स्टैरॉयड्स कम करने से कम या पूरी तरह खत्म हो जाते है। डी एम ए आर डी(बायोलॉजिक व नॉन बायोलॉजिक) भी दुष्प्रभाव कर सकते है जो कभी कभी गंभीर भी हो सकते है।

२.६. इलाज कब तक चलना चाहिए?

जब तक इस बीमारी के लक्षण रहते है तब तक इलाज बंद नहीं होना चाहिए। यह एक मानी हुई बात है की बच्चों में स्टैरॉयड्स को पूरी तरह हटा पाना बहुत कठिन होता है। यदि काम से काम मात्र में भी स्टैरॉयड्स लेते हुए बच्चों की बीमारी के लक्षण दबे रहे तब भी उनकी बीमारी लम्बे समय तक शांत रह सकती है। कई मरीज़ों में बीमारी बार बार उभर कर न आ पाये इसके लिए यही एक बेहतर मार्ग सिद्ध हो सकता है।

२.७. पारम्परिक इलाजों का इस बीमारी में क्या योगदान है?

कई पारम्परिक इलाज उपलब्ध होने के कारण माता पति व परिवार जन भ्रमति हो सकते है। यदि आप अपने बच्चे के लिए इन औषधियों का उपयोग करना चाहते है तो पहले आने बालरोग चकित्सक से सलाह अवश्य कर लें क्योंकि कभी कभी इन औषधियों के दुष्प्रभाव हो सकते है व दो प्रकार की पैथी की दवा मिला कर देने से बच्चे को अधिक हानि पहुँच सकती है। यह समझना अति आवश्यक है की जब लुपस की बीमारी को काबू में रखने के लिए दवाएं दी जा रही होती है, तब उन्हें यकायक बंद करने से बीमारी की तीव्रता बढ़ सकती है व जानलेवा हो सकती है। इसीलिए किसी अन्य प्रकार की औषधि देने से पूर्व अपने चकित्सक से सलाह अवश्य कर लें।

२.८. समय समय पर कौन सी जाँचे आवश्यक है?

नियमित रूप से चकित्सक से परामर्श इस बीमारी में आवश्यक होता है क्योंकि इस बीमारी में अधिकांश तकलीफें यदि जल्दी पहचान ली जाएं तो उनका समय पर निदान किया जा सकता

है। आमतौर से हर ३ महीने में चकित्सक से परामर्श अनिवार्य होता है। जुरत के अनुसार वभिन्न परामर्श किये जाने चाहिए जैसे: बाल चार्म रोग विशेषज्ञ, बाल रक्त रोग विशेषज्ञ, बाल गुरदारोग विशेषज्ञ इत्यादी इनके अलावा साइकोलॉजिस्ट, सामाजिक कार्यकर्ता, आहार विशेषज्ञ व अन्य स्वास्थ्य देखभाल कर्मचारी भी लुपस से पीड़ित बच्चों की देखबहाल में मदद करते हैं।

इन बच्चों की कुछ जाँचें नियमति रूप से होनी चाहिए जैसे: रक्तचाप का माप, पेशाब की जांच, रक्त कण व चीनी की मात्र की जांच, कोएगुलेशन टेस्ट, कॉम्प्लीमेंट लेवल, डी एस डी एन ए इत्यादी जब लुपस के लिए दवाएं चल रही होती हैं तब नियमति रूप से रक्त कण की जांच अनिवार्य होती है जिससे यह जांच हो जाये की यह दवाएं रक्त कण के बनने में कोई खराबी तो नहीं कर रहीं।

२.९. यह बीमारी कब तक जारी रहती है?

जैसा पहले बताया गया है, इस बीमारी का कोई ठोस नदिान नहीं है। नियमति रूप से बाल रोग विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार दवाएं लेते रहने से इस बीमारी के लक्षण पूरी तरह समाप्त हो सकते हैं। अन्य कारकों के अलावा, पूरी तरह दवा ना लेना, संक्रमति रोग होना, मानसिक दबाव होना व अधिक धुप में रहने से यह बीमारी तीव्र हो सकती है। इस को "लुपस फ्लैर" भी कहा जाता है।

२.१०. लम्बे दौरान में इस बीमारी में क्या होता है?

इस बीमारी का लम्बे दौर के बाद परणाम दवाओं के प्रयोग से बहुत अच्छा हो सकता है। इस बीमारी से पीड़ित कई बच्चे लम्बे समय तक ठीक रहती हैं। कुछ बच्चों में यह बीमारी गंभीर रूप ले ले कर बचपन व कशिरावस्था में भी रह सकती है व इसके गंभीर परणाम हो सकते हैं। बच्चों में इस बीमारी का परणाम इस पर भी निर्भर करता है की अंदरूनी अंगों पर कतिना प्रभाव है। जनि बच्चों को दमाग पर अथवा गुरदे पर प्रभाव होता है, उनको अधिक लम्बे समय तक दवाओं की आवश्यकता पड़ती है। इसके विपरीत जनि बच्चों को हलकी सी त्वचा की तकलीफ व गठिया का असर होता है, उनकी बीमारी दवाओं के माध्यम से जल्दी ही काबू में आ जाती है व लम्बे समय तक शांत रहती है। पर किसी एक बच्चे के लिए यह निश्चित तौर पर कह पाना बहुत मुश्कलि है की उसकी बीमारी का दौर कैसा रहेगा।

२.११. क्या यह बीमारी जड़ से समाप्त हो सकती है?

यह बीमारी, यदि शुरुआत में ही पकड़ ली गयी व इसका इलाज शुरू कर दिया गया तब लम्बे समय के लिए इसके लक्षण समाप्त हो जाते हैं। परन्तु यह एक जीर्ण रोग है जो कभी कभी अप्रत्याशति रूप से सामने आ सकता है।

३. रोजमर्रा का जीवन

३.१. इस बीमारी का बच्चों व उनके परिवार के रोजमर्रा के जीवन का क्या प्रभाव पड़ता है?
एक बार इलाज हो जाये और बीमारी के लक्षण समाप्त हो जाये, उसके बाद बच्चे अधिकतर सामान्य दिनचर्या व्यतीत कर सकते हैं। अधिक धूप व अधिक यू.वी करिणें, जैसे की डस्को लाइट में होती है, इनसे विशेष बचाव की आवश्यकता होती है। इनकी वजह से बीमारी की तीव्रता बढ़ सकती है। खास तौर से इन बच्चों को समुद्र के अथवा तरणताल के नज़दीक धूप में बहुत समय व्यतीत नहीं करना चाहिए। नियमति रूप से ऐसी सनस्क्रीन क्रीम का प्रयोग करना चाहिए जिसका एस पी एफ़ (धूप से बचाव की क्षमता) ४० से अधिक हो। १० वर्ष की आयु के बाद यह अनिवार्य है की इस बीमारी से ग्रस्त बच्चे अपनी देखभाल में सहायता करें व धीरे धीरे अपनी दवाओं के वषिय में जाने व उन्हें समय पर लेने की ज़िम्मेदारी में भी भागी बनें। बच्चों व अभिभावकों को लुपस के लक्षणों के वषिय में जानकारी होनी चाहिए जिससे यदि कभी बीमारी की तीव्रता बढ़ती है तब उन्हें तुरंत पता चल सके। लुपस के कुछ लक्षण, जैसे हर समय थकान महसूस करना या कुछ न करने की इच्छा होना, बीमारी की तीव्रता शांत होने के बाद भी बने रह सकते हैं। बच्चों को शारीरिक कसरत पर विशेष ध्यान देना चाहिए इससे वज़न ठीक रहता है व हड्डियों की मज़बूती भी बानी रहती है और शरीर में चुस्ती रहती है।

३.२. शिक्षा के वषिय में क्या प्रभाव हो सकते हैं?

जो बच्चे लुपस से प्रभावित होते हैं वह वदियालय जा सकते हैं व उन्हें रोज वदियालय जाना चाहिए। सिर्फ जब लुपस की बीमारी की तीव्रता बढ़ी हुई हो, उस समय शिक्षण प्रभावित हो सकता है। यदि लुपस से दमिाग पर प्रभाव न पड़ा हो तब बच्चों के सोचने व समझने की शक्ति पर कोई दुष्प्रभाव नहीं होता। दमिाग पर बीमारी के प्रभाव के कारण ध्यान केंद्रित न कर पाना, यादाश्त कमज़ोर होना, मज़िाज़ में परिवर्तन आना, सरि दर्द होना आदि दिक्रिते हो सकती हैं। इन दिक्रितों के लिए विशेष शिक्षण साधनों का उपयोग किया जा सकता है। जहाँ तक संभव हो बच्चों को न केवल शैक्षिक योग्यता बल्कि पाठ्येतर गतिविधियों में भाग लेने के लिए भी प्रोत्साहित करना चाहिए। शिक्षकों को बीमारी के वषिय में अवगत करा देना चाहिए जिससे वह बीमारी की तीव्रता के अनुसार बच्चे की सहायता कर पाएं।

३.३ खेल कूद के वषिय में क्या ध्यान रखना होता है?

खेल कूद में किसी भी प्रकार की रोक टोक की कोई आवश्यकता नहीं होती और न ही करनी चाहिए। जिस समय बीमारी शांत होती है, तब नियमति वर्जशि को प्रोत्साहित करना चाहिए। तेज़ चलना, तैराकी, साइकलिंग इत्यादि एरोबिक वर्जशि बच्चों के लिए बहुत अच्छी रहती है। बाहरी गतिविधियों के समय धूप से बचाव के लिए पूरी बांह के कपड़े, सनस्क्रीन क्रीम, व भरी दोपहर में धूप से बचाव जैसी कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। अत्यधिक थकावट वाली वर्जशि नहीं करनी चाहिए। बीमारी की तीव्रती जब बढ़ी हुई होती है उस समय वर्जशि क्षमता के अनुसार ही करनी चाहिए।

३.४. खान पान के वषिय में बताये

इस बीमारी के इलाज के लिए कोई विशेष खान पान नहीं है। सभी की तरह इन बच्चों को भी स्वस्थ, संतुलित आहार लेना चाहिए। यदि बच्चे स्टैरॉयड्स ले रहे हों, तब कम नमक व कम चर्बी वाले खाद्य पदार्थ लेने चाहिए जिससे उच्च रक्तचाप, मधुमेह व अत्यधिक वजन बढ़ने से बचाव हो सके। इसके अतिरिक्त विटामिन डी व कैल्शियम की पूरक खुराक भी लेनी चाहिए जिससे हड्डी आं पतली न पड़ पाए। अन्य कोई भी विटामिन इस बीमारी में खास मदद करता हो इसका कोई वैज्ञानिक सबूत नहीं है।

३.५. क्या वातावरण से इस बीमारी पर प्रभाव पड़ता है?

यह तो जानी हुई बात है की इस बीमारी में धूप में अधिक समय व्यतीत करने से त्वचा पर नए धब्बे उभर सकते हैं और वह लुपस की बीमारी की तीव्रता बढ़ा सकते हैं। इसी लिए धूप के प्रभाव से बचने के लिए इन बच्चों को धूप से बचाव की क्रीम (सन स्क्रीन) हमेशा उपयोग करनी चाहिए। जब धूप में तेजी हो तब प्रत्येक ३ घंटे में सन स्क्रीन का उपयोग करना चाहिए व पूरी बर्तों के कपड़े व चौड़ी कनारी की टोपी पहननी चाहिए। यदि कई सन स्क्रीन पानी रोधक होते हैं, फिर भी पानी के उपयोग अथवा तैराकी के पश्चात इनका उपयोग दोबारा से करना चाहिए। धूप में निकलने के काम से काम ३० मिनट पहले सन स्क्रीन का उपयोग करना चाहिए। यू वी करिणें बादलों को सरलता से पार कर लेती हैं, इसी लिए बादल होने पर भी सन स्क्रीन का उपयोग करना चाहिए। फ्लोरोसेंट लाइट, हैलोजन लाइट, व कंप्यूटर के मॉनिटर की रोशनी से भी यू वी करिणें निकलती हैं जो कुछ बच्चों को नुकसान पहुंचा सकती हैं, इसी लिए घर के भीतर भी सन स्क्रीन का उपयोग करना चाहिए व कंप्यूटर स्क्रीन के लिए विशेष यू वी फ़िल्टर का उपयोग करना चाहिए।

३.६. क्या इन बच्चों का टीकाकरण कर सकते हैं?

इन बच्चों में कीटाणुओं से होने वाली बीमारियां अधिक हो सकती हैं इसी लिए इन बच्चों में टीकाकरण का विशेष महत्व है। बाल अवस्था में किये जाने वाले सभी टीकाकरण इन बच्चों को दिये जाने चाहिए। जिस समय बीमारी की तीव्रता अधिक हो या ऊँची मात्रा में स्टैरॉयड्स अथवा बायोलाजिक दवाएं दी जा रही हों, उस समय जीवित वायरस वाले टीके नहीं दिये जाने चाहिए (जैसे: एम, एम आर का टीका, पोलियो ड्रॉप्स, चिकिन पॉक्स का टीका) पोलियो की ड्रॉप्स घर में रह रहे अन्य सदस्यों को भी नहीं दी जानी चाहिए। नुमोकोकल, मेनगोकोकल व वार्षिक इन्फ्लुएंजा के प्रति टीकाकरण अवश्य किया जाना चाहिए। कशिरावस्था के बच्चों को एच.पी.वी. का टीका भी लगाना चाहिए।

यह ध्यान रखने की बात है की इन बच्चों में टीकों की क्षमता आम बच्चों से काम होती है, इसलिए इन बच्चों को टीके बार बार लगाने पड़ सकते हैं।

३.७. यौन प्रक्रिया, गर्भ धारण अथवा गर्भरोध के वषिय में क्या सलाह है?

यौन प्रक्रिया में इस बीमारी की वजह से कोई तकलीफ नहीं होती व कोई विशेष प्रतिबन्ध

नहीं है। पर गर्भ धारण करने के पहले बीमारी की तीव्रता शांत होनी चाहिए अथवा गर्भ धारण करने के पहले दवाएं काम होनी चाहिए क्योंकि अधिकतर दवाएं गर्भ में पल रहे शिशु में विकृति पैदा कर सकती हैं। अधिकांश महिलाओं को गर्भ धारण करने में कोई दक्कत नहीं होती व वह एक स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकती हैं। गर्भ धारण नयोजति रूप से होना चाहिए व उसका सही समय तब होता है जब बीमारी शांत हो खास कर की गुरदे की तकलीफाइन महिलाओं को गर्भ पूरण करने में कठनाई होती है या तो दवाओं के कारण या बीमारी के कारण। इस बीमारी में समय से पहले शिशु का जन्म, गर्भ गरि जाना व शिशु में विकृति {अपेंडक्स २} होने का खतरा रहता है। जनि महिलाओं में एंटी फॉस्फोलपिडि एंटीबाडी (अपेंडक्स १) की मात्रा अधिक होती है उनमें गर्भ से सम्बंधित दक्कतें अधिक होती हैं।

गर्भधारण इन महिलाओं में बीमारी की तीव्रता बढ़ा भी सकता है, या शांत बीमारी को फिर से उभार सकता है। इस बीमारी से पीड़ित गर्भवती महिलाओं को ऐसे स्त्री रोग विशेषज्ञ के समपर्क में रहना चाहिए जो संधवात विशेषज्ञ के सामंजस्य से कार्य करता हो।

गर्भ नरोध का सबसे सुरक्षित उपाय कंडोम या डायोफ्राम व शुक्राणुनरोधक क्रीम है। गर्भ नरोधक गोलीयां जसिमें सरिफ प्रोजेस्टेरोन होता है, भी सुरक्षित रूप से इस्तेमाल की जा सकती है व कुछ प्रकार की कॉपर टी भी सुरक्षित रूप से इस्तेमाल की जा सकती है। जनि गर्भ नरोधक गोलीयों में एस्ट्रोजन की मात्रा अधिक होती है, कभी कभी इस बीमारी को बढ़ा सकती है।

४. परशिष्ट १: एंटीफोस्फोलपिडि एंटीबाँडी

एंटीफोस्फोलपिडि एंटीबाँडी शरीर में पाये जाने वाले फॉस्फोलपिडि के अथवा फॉस्फोलपिडि को चपिकने वाले प्रोटीन के वरिद्ध बनती है। तीन एंटीफोस्फोलपिडि एंटीबाडी जनि के वषिय में अधिक जानकारी है, वे हैं एंटीकार्डओलपिनि एंटीबाँडी, बीटा २ जी पी १ व लुपस एंटी कोअगुलांट। यह लुपस से पीड़ित लगभग ५०% बच्चों में पायी जाती है परन्तु लुपस के आलावा भी कुछ अन्य बीमारियों में यह एंटीबाँडीज पायी जा सकती है।

यह एंटीबाडीज रक्त कोशिकाओं में रक्त का थक्का बनने को बढ़ावा देती है जसिसे यह कई तकलीफें पैदा करती है, जैसे रक्त कोशिकाओं में रक्त का जमाव, रक्त में प्लेटलेट कणों की कमी हो जाना, सर में तेज दर्द होना जसि माइग्रेन कहा जाता है व चमड़ी पर नीले धब्बे दिखाई देना (लविडिओ रेटक्युलॅरसि) इत्यादी। दमाग की रक्त कोशिकायें पतली होने के कारन अधिक प्रभावित हो सकती है व इससे स्ट्रोक भी पड़ सकता है। पैरों की रक्त कोशिकायें व गुरदे भी इससे प्रभावित हो सकते हैं। जब इन एंटीबाडीज के होने से शरीर के अंगों पर प्रभाव पड़ता है तब उसे एंटीफोस्फोलपिडि सडिरोम कहा जाता है।

इन एंटीबाडीज का महत्व गर्भावस्था में विशेष तर है क्योंकि वहां यह नाल की छोटी रक्त कोशिकाओं में रक्त का थक्का बना सकती है जसिसे भ्रूण में शिशु को उचित मात्र में रक्त नहीं प्राप्त हो पाता। इस कारण अपरपिक्व गर्भपात, माँ का रक्तचाप गंभीर रूप से बढ़ जाना (प्री एक्लेम्पसिया), मृत प्रसव (स्टलि बर्थ) व शिशु का वजन बहुत काम होना जैसी तकलीफें हो सकती हैं। इन एंटीबाडीज के कारणवश कुछ महिलाओं को गर्भ धारण करने में भी तकलीफ हो सकती है।

अधिकांश बच्चे जनिमे यह एंटीबाडीज पायी जाती है, इनके दुष्प्रभाव से पीड़ित नहीं होते परन्तु इनके दुष्प्रभावों का खतरा बना रहता है। इसीलिए इस विषय पर अनुसन्धान चल रहा है जिससे इन एंटीबाडीज से हो सकने वाले दुष्प्रभावों को पहले ही टाला जा सके। फलहाल इन बच्चों को एस्प्रेनि की दवा काम मात्र में दी जाती है। एस्प्रेनि की दवा जब काम मात्र में दी जाती है तब वह प्लेटलेट की चपिकन को काम करके रक्त का थक्का बनने से रोकती है व इससे रक्त का गाढ़ापन काम होता है। कशिरावस्था में धूम्रपान व गर्भनरोधक गोलियों का प्रयोग भी इसमें वर्जित है।

जब इस कारन से रक्त का थक्का (थ्रोम्बोसिस) हो जाता है तब रक्त को पतला करने व जमाव या थक्का बनने से रोकने के की एंटी कोओगुलांट दवाओं का उपयोग किया जाता है, जनिमे सबसे अधिक उपयोग वारफारिन नामक दवा का होता है। यह दवा प्रतिदिन ली जाती है व इसका असर देखने के लिए नियमित तौर से रक्त की जांच भी करवाई जाती है। इसी प्रकार हीपैरीन नामक एक इंजेक्शन भी त्वचा के नीचे प्रतिदिन लगाया जा सकता है। यह दवाएं चलने की अवधि इस पर निर्भर करती है की रक्त का जमाव किस प्रकार का है व उसकी गंभीरता कतिनी अधिक है।

जो महलायें इन एंटीबाडीज के कारण गर्भधारण न कर पा रही हों, उन्हें भी कुछ दवाएं दी जा सकती है जिससे इनका प्रभाव काम हो जाये। इन महिलाओं को वारफारिन नहीं दी जा सकती क्योंकि उससे नवजात शिशु को जन्मजात अपरचना (मालफॉर्मेशन) होने की सम्भावना होती है। एस्प्रेनि व हेपरिन का उपयोग गर्भावस्था में भी किया जा सकता है। यदि इन दवाओं का उपयोग किया जाये व स्त्री रोग विशेषज्ञ के नियमित संपर्क में रहा जाये तो लगभग ८०% महलायें गर्भधारण कर सकती है।

५. परशिष्ट २. नीओनेटल लुपस

नीओनेटल लुपस भ्रूण व नवजात शिशु को हो जाने वाली एक बीमारी है जो कभी कभी पायी जाती है। यह बीमारी गर्भवती स्त्री की नाल के द्वारा भ्रूण में कुछ एंटीबाडीज के चले जाने के कारण होती है। इन एंटीबाडीज को एंटी रो व एंटी ला कहा जाता है। यह विशेष एंटीबाडीज लुपस से पीड़ित लगभग एक तिहाई महिलाओं में पायी जाती है परन्तु सभी के शिशुओं को इनके दुष्प्रभाव नहीं होते। दूसरे हाथ पर कभी कभी यह बीमारी उन महिलाओं के शिशुओं को भी ओ सकती है जनिमे यह एंटीबाडीज नहीं भी होती।

नीओनेटल लुपस सामान्य लुपस से भिन्न होता है। इस बीमारी के लक्षण ३-६ माह की उम्र तक समाप्त होने लगते हैं व सामान्यतः कोई दुष्प्रभाव नहीं छोड़ते। इस बीमारी से पीड़ित अधिकांश बच्चों में त्वचा पर लाल धब्बे पाये जाते हैं, जो धूप में जाने से बढ़ जाते हैं व जनम के कुछ दिन या कुछ हफ्तों में दिखाई देने लगते हैं। यह धब्बे सामान्यतः कुछ दिन में समाप्त हो जाते हैं व अपने पीछे कोई नशान भी नहीं छोड़ते। इसके अलावा जो दूसरी तकलीफ आमतौर से इन बच्चों में पायी जाती है वह है रक्त कणों का काम होना। यह भी आमतौर पर गंभीर नहीं होता व इसके लिए कोई विशेष उपचार की आवश्यकता नहीं पड़ती।

कभी कभी नवजात शिशु को एक विशेष प्रकार की हृदय में होने वाली तकलीफ हो सकती है जिसको कनजेनाइटल हार्ट ब्लॉक कहते हैं। इस हार्ट ब्लॉक में शिशु के हृदय की धड़कन असामान्य रूप से धीमी पड़ जाती है। यह विकृति स्थाई होती है। इसका नदिान शिशु के जन्म के पहले भ्रूण के हृदय के अल्ट्रासाउंड के द्वारा १५ से २५ हफ्ते की गर्भावस्था में किया जा

सकता है। यदि इस का नदान जन्म की पहले ही हो जाये तब कुछ दवाओं की मदद से इसका इलाज संभव है। जब इस का नदान शिशु की जन्म की बाद होता है तब अधिकतर शिशुओं को पेस मेकर की आवश्यकता पड़ती है। यदि किसी महिला की एक शिशु को यह तकलीफ हो तब दुसरे शिशु को यही तकलीफ होने का जोखिम १०-१५ % तक रहता है। इस बीमारी से पीड़ित बच्चे सामान्य रूप से पनपते हैं व् आमतौर से उन्हें कोई तकलीफ नहीं होती व् उन्हें बाद में लुपस की तकलीफ होने का जोखिम भी बहुत कम होता है।